सम्प्रदायवाद और विभाजन →

सम्प्रदायवाद एक आधुनिक विचारधारा है। यद्यपि भारत में मध्ययुग में हिन्दू और मुस्लिम दो सम्प्रदाय थे किन्तु सम्प्रदायवाद जैसी कोई अवधारणा विकसित नहीं हुई थी। वस्तुतः सम्प्रदायवाद की जड़ भारत में औपनिवेशिक पद्धति में निहित है।

→ सम्प्रदायवाद में भी दो चरण देखे जा सकते हैं — उदार चरण और उग्र चरण प्रथम चरण में सम्प्रदायवाद ऐसा मानता है कि किसी खास धार्मिक सम्प्रदाय के गैरधार्मिक हित (राजनीति, आर्थिक आदि) समान होते हैं तथा दूसरे सम्प्रदाय के गैरधार्मिक हितों से अलग होते हैं। किन्तु दूसरे चरण में सम्प्रदायवाद का बल इस बात पर हो जाता है कि एक सम्प्रदाय के गैरधार्मिक हित दूसरे सम्प्रदाय के गैरधार्मिक हितों के विरोधी होते हैं। परन्तु हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि सम्प्रदायवाद का उग्र चरण उदारवादी चरण की तार्किक परिणति होता है।

→ सम्प्रदायवाद का भारत में सबसे बड़ा कुप्रभाव रहा — समन्वित संस्कृति की अवधारणा की अस्वीकृति। मुस्लिम और हिन्दू सम्प्रदायवादी दोनों ने यह घोषित किया कि हिन्दू और मुसलमान दोनों दो राष्ट्र हैं जबकि ग्यारह सदी तक साथ-साथ रहते हुए हिन्दू और मुसलमानों ने एक समन्वित संस्कृति का विकास किया था। इस समन्वित संस्कृति के कई पहलू थे यथा खान-पान, वेश भूषा, जीवन दृष्टिकोण, साहित्य, कला, धर्म आदि। धर्म इस समन्वित संस्कृति का एकमात्र पहलू है। किन्तु समन्वित संस्कृति के अन्य पहलुओं की उपेक्षा कर, एकमात्र धर्म को आधार बनाकर यह घोषित करना कि हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्र हैं, कहाँ तक उचित है? आगे पाकिस्तान के दूसरे विभाजन एवं बांग्लादेश के निर्माण ने धर्म पर संस्कृति की विजय को सिद्ध कर दिया। पूर्वी बंगाल के राष्ट्रवादियों ने घोषित किया "आमार सोनार बांग्ला"

ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत सम्प्रदायवाद को प्रेरित करने वाले कारक :-

① यह औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के ढाँचे में ही निहित था। जैसा कि हम देखते हैं कि ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत विकास के अवसर अत्यन्त सीमित थे और सरकारी सेवा ही रोजगार प्राप्त करने का एकमात्र जरिया था। इसलिये हिन्दू और मुस्लिम दोनों सम्प्रदाय के अवसरवादी नेता सरकार की निकटता प्राप्त करने के लिये प्रतिस्पर्धा करने लगे।

② भारतीय इतिहास की साम्प्रदायिक व्याख्या (जेम्स मिल)

③ समाज तथा धर्मसुधार आन्दोलन के पुनरुत्थानवादी चरित्र ने भी अनजाने ही सम्प्रदायवाद को प्रोत्साहन दिया।

④ 1920 और 30 दशक में समाजवाद और साम्यवाद के उद्भव ने मुस्लिम जमींदारी तत्वों को भयभीत कर दिया। उन्हें अपनी निजी सम्पत्ति को खोने का खतरा नजर आ रहा था। समाज का विभाजन आर्थिक रूप से न हो जाए इसलिए जानबूझकर उन्होंने साम्प्रदायिक विभाजन को प्रोत्साहन देना आरम्भ किया।

Scanned by CamScanner

1909 - मार्ले-मिण्टो सुधार

10.10. 1906 इण्डियन मुस्लिम लीग

भारतीय राजनीति में साम्प्रदायवाद की प्रगति :-

① 1857 के पश्चात मुस्लिम विरोधी नीति और सर सैयद अहमद खाँ
② शिमला प्रतिनिधिमण्डल तथा मुस्लिम लीग का गठन
③ 1910 तथा उसके पश्चात लीग पर राष्ट्रवादी नेताओं का प्रभाव तथा 1916 का लखनऊ पैक्ट
④ खिलाफत का मुद्दा तथा साम्प्रदायवाद को प्रोत्साहन
⑤ जिन्ना का उद्भव तथा संवैधानिक राजनीति से साम्प्रदायिक राजनीति की ओर मुड़ना
⑥ 1937 का चुनाव

किन कारकों ने जिन्ना को संवैधानिक नेता से साम्प्रदायिक नेता बना दिया
→ जिन्ना जो 1906 तथा उसके पश्चात भी कांग्रेस की संवैधानिक राजनीति से जुड़े रहे तथा सदा उदारवादी नेताओं का हाथ मजबूत किया। 1920 के दशक में भारतीय राजनीति पर हाशिए पर चले गये। इसका सबसे बड़ा कारण था- गांधी का उद्भव तथा जनांदोलन की शुरुआत। इसके पश्चात जिन्ना का राजनीतिक कद अचानक छोटा हो गया। अतः जिन्ना अब नया राजनीतिक आधार तलाश रहे थे तथा इसी क्रम में उन्होंने अल्पसंख्यक राजनीति से स्वयं को जोड़ना आरंभ किया। चूँकि साम्प्रदायिक राजनीति में न उन्हें दिलचस्पी थी और न ही राजनीतिक अनुभव, इसलिए आरम्भ में उन्होंने यहाँ भी मात खाई। वे मुस्लिम लीग के उदारवादी गुट का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। 1928 में वे नेहरू रिपोर्ट पर कांग्रेस से संयुक्त निर्वाचन के मुद्दे पर एक समझौता करने के लिये भी तैयार थे किन्तु वार्ता टूटने पर जिन्ना को एक और गहरा झटका लगा। सबसे बढ़कर 1937 के चुनाव में मुस्लिम लीग की करारी हार ने जिन्ना को उग्र साम्प्रदायवाद की ओर बढ़ने के लिये प्रोत्साहित कर दिया। जिन्ना अब इस स्थिति पर पहुँच चुके थे कि लीग की चुनावी सफलता के लिए जनाधार का विस्तार करना आवश्यक है, अतः अब स्पष्ट रूप से धार्मिक और साम्प्रदायिक प्रतीकों को अपनाया जाने लगा। लीग के नेताओं की बैठक मस्जिदों में होने लगी तथा पाकिस्तान का प्रोपेगैंडा खड़ा किया गया। जिन्ना ने स्पष्ट रूप से यह उद्घोषणा की कि हिन्दू और मुसलमान दो राष्ट्र हैं तथा "लड़कर लेंगे पाकिस्तान"। इस प्रकार जिन्ना अब संवैधानिक नेता से साम्प्रदायिक नेता के रूप में बदल चुके थे।

Scanned by CamScanner

Q- चर्चा कीजिये की 1947 में कांग्रेस ने भारत का विभाजन किस कारण से स्वीकार किया था?

→ कांग्रेस के द्वारा भारत के विभाजन की स्वीकृति आधुनिक भारत के इतिहास का एक बड़ा ही विवादास्पद मुद्दा रहा है। इस संबंध में एक विचार यह है कि विभाजन की स्वीकृति भारतीय बुर्जुआ वर्ग का साम्राज्यवादी शक्ति के समक्ष समर्पण को रेखांकित करती है क्योंकि यह वर्ग स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये जनांदोलन का खतरा मोल लेने के लिए तैयार नहीं था तथा दूसरे विचार के अनुसार विभाजन की स्वीकृति को कमजोरी बताया जाता है।

→ अगर हम तथ्यों का गहराई से अवलोकन करते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि विभाजन की स्वीकृति को बुर्जुआ वर्ग के उद्भेद अथवा कांग्रेस की कमजोरी के सन्दर्भ में देखने के बजाए तात्कालिक बाध्यताओं के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिये। यद्यपि यह सही है कि कांग्रेस ने सम्प्रदायवाद के विरुद्ध संघर्ष को उतनी गंभीरता से नहीं लिया जितना की साम्राज्यवाद के विरुद्ध। फिर इसने कुछ रणनीतिक भूलें भी की जिसके परिणामस्वरूप 1940 के दशक तक सम्प्रदायवाद बेकाबू हो चुका था। विभाजन का विकल्प केवल व्यापक रक्तपात और हिंसा नजर आ रहा था। जो हिन्दू मुस्लिम दंगे कलकत्ता से आरंभ हुए थे, वे बिहार, बंगाल के नोआखाली, बाम्बे से होते हुए पंजाब तक पहुँच चुके थे। ~~फिर~~ चूंकि सरकार भी ब्रिटिश के हाथों में थी तथा सरकार इस दंगे को दबाने के लिये गंभीर प्रयास नहीं कर रही थी। उधर वल्लभ भाई पटेल के शब्दों में अन्तरिम सरकार ~~भी~~ के अन्तर्गत भी लियाकत अली खान के अधीन मुस्लिम लीग के मंत्रियों ने प्रत्यक्ष कारवाई शुरू कर दी थी। सबसे बढ़कर सम्प्रदायवाद की चेतना जनसामान्य तक पहुँच चुकी थी तथा सम्पूर्ण देश में एक विस्फोट की स्थिति कायम थी। स्वयं गांधी जी जैसे नेता जिन्होंने कभी घोषणा की थी कि मेरी लाश पर ही यह विभाजन कबूल होगा, उन्होंने भी विभाजन की कड़वी सच्चाई को स्वीकार कर लिया था। जनसामान्य के बीच सम्प्रदायवाद ~~की जड़~~ इतनी गहराई तक पहुँच चुका था कि विभाजन के विरुद्ध जन आंदोलन छेड़ना व्यवहारिक रूप में संभव नहीं था।

→ इसलिये कांग्रेस द्वारा विभाजन की स्वीकृति को सत्ता लोलुपता, बुर्जुआ वर्ग के समर्पण या कांग्रेस की कायरता करार देने की बजाए कांग्रेस की रणनीतिक भूलों तथा 1940 के दशक में होने वाले सम्प्रदायवाद के उभार के सन्दर्भ में समझा जाना चाहिये।

Scanned by CamScanner

Q→ विभाजन ब्रिटिश की विफलता थी? क्या आप सहमत हैं?

→ नहीं क्योंकि 1946 से पूर्व तक ब्रिटिश ने विभाजन को रोकने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई

- विभाजन को रोकने का प्रयास तो अलग, अगर ब्रिटिश चाहते तो इस दौरान हुए भयंकर रक्तपात को रोक सकते थे पर वो भी नहीं किया
- मात्र 72 दिनों में विभाजन और स्वतन्त्रता का क्रियान्वयन
- सेना अफसर आदि का ध्यान सिर्फ अंग्रेज जनसंख्या की सुरक्षा पर

दूसरे 1946 से जब इस ओर रुख बदला भी तो उनका रुख निश्चित नहीं था। वह विभाजन रोकने के दिखावे के द्वारा जहाँ कांग्रेसी नेताओं को खुश रखना चाहते थे (कामनवेल्थ डिप्लोमेसी- क्योंकि भारत में कांग्रेस का शासन ही कायम होना था)। वहीं पाकिस्तान बनने के फायदे भी देख रहे थे। पाकिस्तान USSR के विरुद्ध ब्रिटेन का एक प्रमुख हथियार सिद्ध हो सकता था। आगे यह बात सिद्ध हो गई जबकि USA ने पाकिस्तान को हथियार बनाकर USSR को शीतयुद्ध में पराजित कर दिया। इसलिये स्पष्ट है कि वास्तव में ब्रिटिश विभाजन रोकने के लिये कृतसंकल्प नहीं थे :. विभाजन होना उनकी विफलता नहीं थी।

Scanned by CamScanner